बेचारा सुधीर

❑ पितराम सिंह गोदारा

यह संक्षिप्त मार्मिक वृत्तान्त एक बड़ी बात कहता हैं । इसमें कतिपय निजी छात्रावासों में घुटते बच्चे और वहां की अव्यवस्थाओं की झलक है तो वार्डन की संवेदनहीनता भी। वृत्तान्त उन अभिभावकों को कटघरे में खड़ा करता है जिन्होंने अपने बच्चों को खुद की अपेक्षाओं के तले दबा दिया है । यह वृतांत शिक्षा के निजीकरण की निम्न मध्यमवर्गीय बच्चे पर पड़ने वाली मार का संकेत भी है।

मैं शहर से दूर एक छोटी-सी ढाणी में बसने वाले गरीब किसान का बेटा । पढ़ा भी तो पास-पड़ौस के विद्यालयों में, 10-15 कि.मी. तक प्रतिदिन आवागमन करना पड़ता था। मेरे मन में छात्रावास के प्रति कुछ इस प्रकार के मनोभाव रहे : छात्रावास पढ़ने वाले छात्रों को सुविधा उपलब्ध करवाने के लिए घर जैसा माहौल प्रदान करने वाला आवासीय स्थल होता है । यहां पर छात्र निश्चंत होकर अपने अध्ययन को जारी रख सकते हैं । खेल-कूद और मनोरंजन के साधन उपलब्ध रहते हैं । पुस्तकालय की व्यवस्था का उपयोग कर सकते हैं । खुले, हवादार, साफ-सुथरे कमरे होते हैं जहां पर दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पर्याप्त सुविधायें उपलब्ध होती हैं । इसीलिए छात्रावासों में रहने वाले छात्र अच्छे अंक प्राप्त करने में सफल रहते हैं । जब पढ़ता था तब तक छात्रावास में रहने की साध पूरी नहीं कर पाया ।

मेरे सारे सपने तब टूटे जब मैंने शहर के एक कोने में बने तथा कथित छात्रावास को देखा । छोटे-छोटे सीलन भरे कमरे, हवा को प्रवेश की इजाजत नहीं । कमरों में भेडों की तरह ठूंसे बालक । एक छोटे से कमरे में आठ से दस तक डाले गये तख्ते । आर पार जाना हो तो एक दूसरे के बिस्तरों को रोंदते हुए ही जाना पड़ता । कमरे में ही गीले कपड़ों को सुखाने की व्यवस्था । सीलन, बदबू, घुटन यही तो सब कुछ है इन कमरों में।

सर्दियों में बच्चों को ठण्डे पानी से नहाते, ठिठुरते बदन देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं । कतारबद्ध खुले में शौच के लिए जाते बालक ऐसे लगते हैं मानों बेडियों से बंधे कैदी किसी खुले स्थान पर काम पर ले जाये जाते हैं। कतारबद्ध बैठकर शौच करते बालक अनुशासन की मिसाल बन जाते हैं ।

खाने के नाम पर अधपकी रोटियां, दाल या कढ़ी । सब्जी तो मानो उनके लिए दूर की कौड़ी है । असंतुलित भोजन करने से अनेकों परेशानियों को भोगता बालपन । शून्य में ताकती आंखें ।

पढ़ाई के नाम पर सुबह शाम कतारबद्ध विद्यालय व छात्रावास के बीच का आवागमन, हाथ में पुस्तक मानो उनका जीवन केवल उसके लिए ही बना है । रटना और सिर्फ रटना । याद न करने पर कोमल नन्हें हाथों पर छड़ी की उभरती लकीरें, भय से कांपता

बदन। यही सब कुछ है छात्रावास में रहने वाले बालकों के भाग्य में।

मनोरंजन भी कुछ होता है यह बात तो बालक भूल ही गया है । कहां है खेल का सामान व खेल का मैदान ? यदि खेल के मैदान में स्वतंत्र छोड़ दिया गया तो तथाकथित वार्डन की नजर बचाकर भाग नहीं जायेगा ? कौन जिम्मेदारी लेगा उसके भागने की ? मनोरंजन के नाम पर एक दूसरे बालकों के क्रन्दन के स्वर ही पर्याप्त हैं।

साथ में अपने कलेजे के टुकड़े के लिए खाने की सामग्री लाए । सामग्री को वार्डन ने अपने कब्जे में ले लिया । कुछ क्षणों के लिए सुधीर का दीदार करवाया । स्वयं हाथ में छड़ी लिए पास में खड़े रहे । जब मिलने का समय खत्म हुआ और सुधीर के पिताजी उसे वार्डन के संरक्षण में छोड़कर घर के लिए रवाना होने लगे तो सुधीर की रुलाई फूट पड़ी । वह जोर-जोर से रोने लगा और अपने पिताजी की मोटर साइकिल को पकड़ने लगा । उसी समय वार्डन ने कसकर सुधीर को पकड़ लिया और एक छड़ी जड़ दी । पिताजी

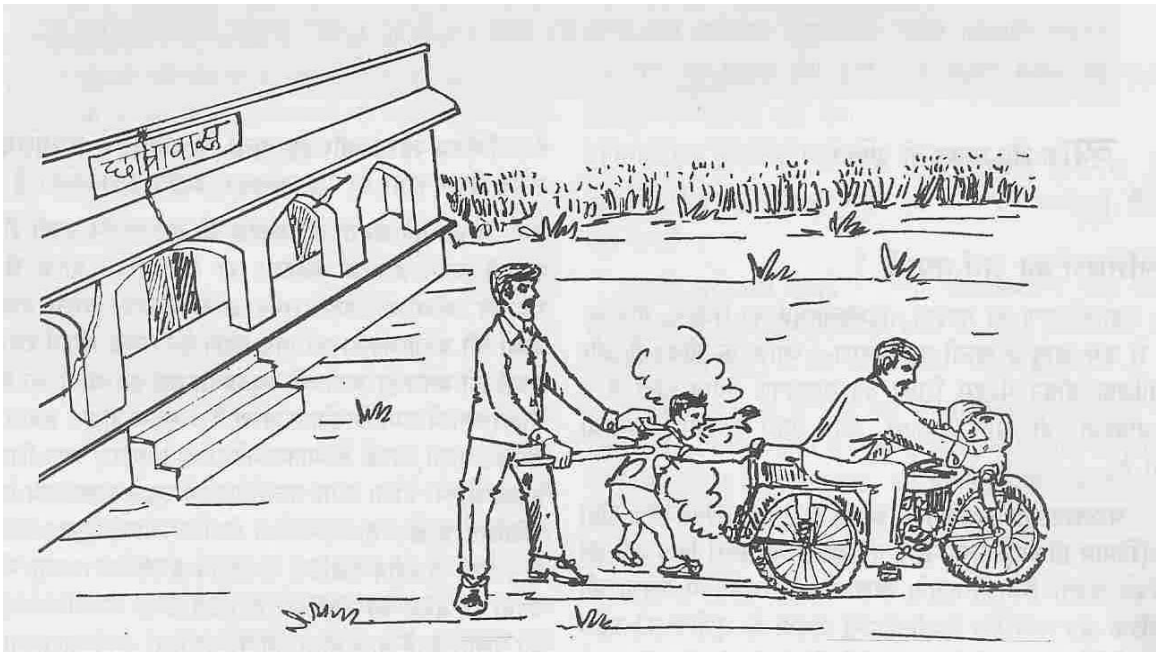

पुस्तकालय क्या होता है ? क्या जरुरत है पाठ्य-पुस्तकों के अलावा पुस्तकें पढ़ने की ! छात्र को अपनी पाठ्य-पुस्तकें याद कर लेना ही पर्याप्त है ।

बालकों के अभिभावक के आने पर उन्हें तथाकथित वेटिंग रूम में बैठकर प्रतीक्षा करने का आग्रह । वेटिंगरूम नहीं है तो लॉन में कुर्सी डालकर उन्हें बैठाया जायेगा और तब शुरू होगा बालक की प्रगति का बखान । वार्डन अभिभावक के मनोमस्तिष्क में अनेक जानकारियां ठूंसने लगता है । उस समय कमरे की खिड़की से झांकता बालक ऐसा लगता है मानो कैदी सलाखों के पीछे अपने परिजनों से मिलने के लिए उतावला हो रहा हो और दरोगा उसे मिलने नहीं दे रहा हो ।

सुधीर एक ऐसा ही बालक है जो मेरे पड़ौस के एक ऐसे ही निजी छात्रावास में रहता है । उसके पिताजी मिलने के लिए आये। की मोटर साइकिल नहीं रुकनी थी, वह नहीं रुकी । अब तो सुधीर का धीरज छूट गया और उसने जोर से दहाड़ मारते हुए कहा, ''पापा एक बार पीछे मुड़ कर तो देखो।'' मैं यह सब कुछ देख रहा था। मेरी रूह कांप गई। इस दृश्य को देखकर मेरा ही नहीं बड़े-बड़े दिल वालों का कलेजा भी कांप सकता है । बच्चे की उम्र सिर्फ 8 वर्ष।

वाह रे ! अभिभावक । पढ़ाई के नाम पर यह सब कुछ देखकर भी अनदेखा कर रहा है ? तिल-तिल कर मिटता जीवन, सिसकती आहें तुम्हें दिखाई नहीं दे रही ? क्या अपेक्षाएं हैं ऐसे बालक से ? कैसा पैदा किया जा रहा है भावी नागरिक ? क्या बाल मनोविज्ञान की बात करने वालों के लिए यह एक चुनौती नहीं है ? कब तक यह चलता रहेगा ? ऐसे बालक कब बन पायेंगे सुनागरिक? उनका सामाजिक जीवन कैसा होगा ? ये सब चिन्तनीय प्रश्न हम सबके सामने हैं । ◆